ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-10* November- 2017
Innovation The Research Concept

चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता

अमिता
प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
श्रीराम कॉलेज ऑफ हॉयर एजूकेशन,
बागपत

सारांश

चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता अन्योन्याश्रित है। चरितार्थता जितनी प्रभावी होगी, प्रभावोत्पादकता भी उसी अनुपात में गहराई, ऊँचाई से युक्त होगी। चरितार्थता में कवि स्वयं भी चरितार्थ होता है और उसका कृतित्व भी। किन्तु प्रभावोत्पादकता का सम्बन्ध उसकी ग्राह्ययता को अन्यों के लिए ग्राह्य बनाने हेतु रहता है। भीतर के वेग और सहज उच्छलन के कारण चरितार्थता होकर ही रहती है। चरितार्थता का रचनाप्रक्रिया से गहरा सम्बन्ध है। चरितार्थता कृतित्व निर्माण की गतिदायक प्रक्रिया है क्योंकि चरितार्थता सायास न होकर स्वयं सृजन की क्रिया से सम्बन्द्ध रहता है। इसी प्रकार प्रभाव भी स्वयं निर्मित होता है। चरितार्थता अपने आप में संवाद सम्बन्ध है और प्रभावोत्पादकता संवाद सम्बन्ध जन्य प्रतिफल। इस कोण से सूर सीधी चरितार्थता एवं सीधी प्रभावोत्पादकता के कवि हैं। संवाद साहित्य में ऐसा होना अनिवार्य है। सूर काव्य में प्रवेश का मुख्यद्वार एवम् बाहर आने का मार्ग कृतित्व को सार्थक बनाते हैं–

"काहे को रोकत मारग सूधो।
सुनहु मधुप! निर्गुन–कंटक तें राजपंथ क्यों रूँधो।।
ग ग ग
राजपंथ ते टारि बतावत उरझु कुबील कुपैंडो।
सूरजदास समाय कहाँ लौं अज के बदन कुम्हैंडो।।[1]

मुख्य शब्द : चरितार्थता, प्रभावोत्पादकता, अन्तर्बाह्यता, रचनाधर्मिता, कृतित्व।

प्रस्तावना

यदि सूधेमन, सूधेवचन हैं तब कवि कर्म भी सीधा चरितार्थता एवं प्रभावोत्पादकता से युक्त होगा। इसे कवि कर्म की कुशलता एवम् कृतित्व में निहित वैचित्र्य आधारित क्रीड़ा भाव कह सकते हैं। चेष्ठाओं की चरितार्थता के अनुरूप ही प्रभावोत्पादकता को उत्पन्न करती है। उसकी वक्रता भी सिधाई की प्रभावोत्पादकता में कारक होती है। सूर के कवि कर्म में क्रीड़ा भाव की अनुरक्तता आद्योपान्त है। सूर का प्रत्येक पद एक 'न्यौछावर' का उदाहरण है जो समग्र प्रभाव का कारक है। चरितार्थता में अन्तर्बाह्यता निहित है और यही अन्तर्बाह्यता ग्राह्यता में निहित होकर समग्र प्रभाव की निष्पत्ति करती है। बाहर–भीतर एवम् भीतर–बाहर का यह विन्यास सूर में चरितार्थ हुआ है। रचनाधर्मिता दुहरी चरितार्थता ही है। रचना के निर्माण की प्रक्रिया और प्रभावित करने की प्रक्रिया को पृथक नहीं किया जा सकता। प्रभाव की निष्पत्ति को रस की निष्पत्ति भी कह सकते हैं। चरितार्थता कृतित्व की अर्थवत्ता, प्रभावोत्पादकता अभिरूचि का निर्धारण भी करती है। चरितार्थता का आधार है कि कृतित्व में अर्थ की चरितार्थता। जिस प्रकार उत्पन्न होती है उसी प्रकार गृहीता में भी अर्थ की निष्पत्ति करती है। वक्तृत्व कला ही समान निर्माण का अवसर देती है। अर्थ संभाव्यता का अवसर निरन्तर बना रहता है। सूरसागर में भाव सागर का उच्छलन भावों से पलायन न कर उनकी चरितार्थता को महत्व देता है। जिससे प्रभावोत्पादकता भी उतनी ही अर्थपूर्ण होती है। चरितार्थता में कवि का व्यक्तित्व भी कृतित्व के संवाद में समाहित हो जाता है और यही कवि कर्म की परिणति भी है। व्यक्तित्व का कृतित्व में समर्पित होना तभी सम्भव है जब व्यक्तित्व कृतित्व के बीच सार्थक संवाद उत्पन्न करने में कवि समर्थ हो। सूर के कृतित्व के अनुसंधान में इन तथ्यों की पहचान ओर संज्ञान लेने की भी आवश्यकता है। सूर भावातिरेक जन्य सहज चरितार्थता के कवि हैं। भावविभोर सूर के सूधे वचन सहज रूप में स्वयं वक्र होकर पुनः सीधे हो जाते हैं जिससे संवादों में प्रभावोत्पादकता, विलक्षणता को प्राप्त करती है।

साहित्यावलोकन

संवाद काव्यार्थ को प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण हैं। चित्रण बाहुल्य उनमें विद्यमान है, साहचर्य भाव निहित है। चेष्टाओं, गतियों तथा क्रियाओं का अबाध

चित्रण चित्रात्मक रूप से हुआ है। दृश्य चित्र के साथ गति चित्र भी विद्यमान है जो आभ्यंतर मनोगति का रूपान्तरण है। भावचित्रों को निर्मित करने में संवाद उतने ही कारगर हैं। वस्तुचित्र, गतिचित्रों में अनिवर्चनीय भाव धारा को बहाने में उनकी संवाद साधना सफल सिद्ध हुई है। चित्त–द्रुति के कारण हृदय का विस्तार उनके संवादों में भी द्रवणशीलता द्वारा अर्थ विस्तार करता है। यही कारण है कि उनका संवाद 16 (सोलह) सहस्र गोपियों तक प्रवाहित होता है। संवाद की श्रुतियाँ भी तद्नुसार हैं। उनके संवाद प्रसंग के अनुसार कम भाव के अनुसार अधिक हैं। अर्थात् भाव के अधीन हैं। सूर के संवाद उस जहाज के पंछी के समान हैं जो अपने स्थान से जाकर पुनः उसी स्थान पर लौटकर आ जाता है। भाव को सर्वोपरि मानने से संवाद की प्रेरणा का आधार यही भाव है। भाव योजना के साथ भाव को पुनः प्राप्त करने में सूर दक्ष हैं। एक प्रकार का सायुज्य का प्रभाव संवादों में बना रहता है। सूर ने इस तथ्य को खण्डित किया है कि कवि का मानस एक समय में एक ही बात पकड़ पाता है। उनके संवादों में लक्ष्यबद्धता के पार जाकर उस पार अर्थ में उत्कर्श को सिद्ध करने की शक्ति निहित है। हृदयरूपी सरिता के प्रवाह के साथ अर्थ का प्रवाह भी उनके कृतित्व में चढ़ता ही जाता है। अर्थ के तटों को तोड़कर सब कुछ को बहा ले जाता है, यही संवादजन्य प्रभावोत्पादकता है। संवादों में अपना प्रवाह है जो प्रचलित प्रवाह–बहाव को पलट कर सब कुछ को बहा ले जाता है। अश्रुओं के प्रवाह से अर्थ प्रवाह की समानता देखते ही बनती है उद्भ्रान्त उक्तियों की योजना भी संवाद सौरस्य को बनाये रखती है। उनके संवाद हृदय का कोना–कोना झांक आये हैं– यह कथन आज भी उतना ही सार्थक है। उनके संवाद इसीलिए सर्वग्राही हैं क्योंकि वे सहृदयता के आधार पर पुनर्रचना करने में समर्थ है। उनके संवादों में बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव हैं।

सूर ने संचार–सन्देश की भावपूर्ण रीतियों का अनुसंधान किया है। उनकी चरितार्थता समाधानपरक भी है। वे इस रीतियों के अनुसंधाता हैं। उनकी चरितार्थता मन, कर्म और वचन से आत्मरूप है। सूर काव्य में चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता उद्धव के 'माध्यम' से हुई है। कृष्ण के सन्देश और उद्धव के सन्देश में यही अन्तर्सम्बन्ध है। भ्रमर का प्रसंग भी उद्धव के सरीखे सशक्त 'माध्यम' का एक ऐसा माध्यम है जिससे चरितार्थता सन्देश को अनेकरूपता देती है। सूरसागर 'रस रूप रत्नसागर' है। जिनमें जड़ मूल से वचन–विचार को स्थान मिला है। रस की बात सीधे संवाद के मूल में है और रस की पहचान ही ग्राह्यता का आधार है। सूर के संवाद सूर के बखान है। अटपटेपन में भी अपनी सार्थकता है। संवाद 'न्यारेपन' से युक्त हैं। उद्धव द्वारा ब्रज में अनरीतियों को प्रचलित करना भी उत्तर प्रतियुत्तर को गति देता है। संवाद का सृजन ही संवाद से मुक्ति का साधन है। जो सूर काव्य में अहम् है। 'मनचकरी' संवाद सौन्दर्य है। बाँके बिहारी के सन्देश में त्रिभंगीय चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता में बाँकपन का होना स्वभाविक है। 'बातन सब कोऊ समझावै' की प्रक्रिया संवाद योजना का आधार है। 'सिखावन' का भाव सूर के पदों में सतत् चरितार्थता का भाव है। मत–अभिमत को प्रस्तुत करना भी संवाद वार्त्ता का उभयपक्षीय प्रस्थान बिन्दु है। अनिवर्चनीयता भी चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता को अनिवर्चनीय बनाती है। इस प्रकार आदान–प्रदान एवम् व्यवहार के सशक्त साध्य हैं संवाद। यही कविता का अचूक प्रभाव पक्ष है।

सूर ने हास्य–व्यंग के माध्यम से 'व्यवहार' के महत्व को आगे बढ़ाया है। तत्कालीन व्यवहार रीतियों को आत्मसात् करते हैं। काव्यरीतियों के निर्माण के लिए अनेक सहज मानव–मानस रीतियों का प्रयोग भी सूरसागर में हुआ है। साहित्य क्योंकि विमर्श की अन्तहीन प्रक्रिया है, अतः सूर के काव्य का विमर्श भी उनकी संवादिता के आधार पर किया जाना चाहिए। अद्भुत तत्व के प्रति उनके कृतित्व में पाया जाने वाला आकर्शण ही उन्हें नवीन प्रयोगों का अवसर देता है। पदों की रचना से तात्पर्य संवादों की रचना है। संवाद उनके कृतित्व में अनेक बार गहराई से ऊँचाई की ओर एवम् ऊँचाई से गहराई की ओर रचनाशीलता को निर्मित करने का अवसर प्रदान करते हैं। उनका कृतित्व संवाद क्रम से बँधा हुआ है और साथ ही प्रभाव माधुरी से युक्त है।

संवाद उद्भावना एवं प्रसंग को आगे बढ़ाने, पुनर्निर्माण द्वारा प्रसंग में अर्थ–सौन्दर्य की सृष्टि करने वाले हैं। संवाद 'मीठी बातन' के संग्रह है। निगमागम के चिन्तन से रहित हैं। सूर के संवाद प्रसंग के चरमोत्कर्श पर आकर विराम ले लेते हैं। चरमोत्कर्ष की योजना चरितार्थता में उत्कर्ष करती है और प्रभावोत्पादकता में भी। समझाने–बुझाने की रीति विफल होने पर भी अर्थसिद्धि होती है। हरि मुख से लेकर चातक मुख तक, ऊधौ से लेकर मधुकर तक संवाद के क्षितिज का विकास हुआ है। कवि जितनी अधिक युक्तियों का अनुसंधान करता है उतनी ही चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है। चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता हृदय के 'भाव' पर आधारित है अर्थात् जिसका जैसा भाव होता है तद्नुसार उसकी प्राप्तियाँ भी होती है। अतः संवाद रचना में सूर 'अति चतुर सुजान' हैं जिनके संवादों में 'श्याम रंग' पर कोई और रंग नहीं चढ़ता। व्यवहार की पारस्परिकता सूर की चरितार्थता के व्यवहार को निश्चित करती है। संवाद युग के प्रश्नों पर सार्थक बहस को आगे बढ़ाते हैं, जिनसे सगुण निर्गुण के संवाद की समस्या का समाधान सम्भव हुआ है। सूर के संवाद रसरूप प्रधान हैं।

सूर के संवाद कृतित्व में और कृतित्व के बाहर सीधे संवाद को निर्मित करते हैं। यह सिधाई किसी भी रूप में हो सकती है। संवाद में से व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों तिरोहित हो जाते हैं अथवा दोनों का संवाद में लय हो जाता है। व्यक्तित्व संवादमय और कृतित्व संवाद योग्य है। सूर प्रयोगावृत्ति के कवि हैं और इसी कारण उनकी चरितार्थता सफल हुई है तथा इसीलिए प्रभावोत्पादकता के समग्र प्रभाव को उत्पन्न करते हैं। वे सभी काव्यतत्वों का अतिक्रमण कर संवाद तत्व को स्थापित करते हैं। इसीलिए मौखिक रूपों को साहित्य रूप बनाने में वे सबसे अधिक सफल हुए हैं। वे आवृत्तियों का सर्जनात्मक प्रयोग भी करते हैं। नाटक के तत्व को काव्य का एक मात्र तत्व बनाने में भी वे सफल हुए हैं। उनकी उक्तियाँ संवाद प्रधान एवम् प्रचुर प्रगल्भता से युक्त हैं। संवाद सृजन के

साथ आस्वाद की प्रक्रिया को भी सम्पादित करते हैं। सूर के संवाद अर्थ–व्याप्ति से युक्त हैं। आप्त कथनों का प्रभाव उनमें विद्यमान है। व्याख्या–विवेचन ओर विश्लेष्ण की अपेक्षा रखते हैं। इनमें तत्व का प्रकाश एवम् शरणागत वत्सलता है जो अभिष्ट अर्थ की सिद्धि में सक्षम है। चित्त के प्रसाधन का गुण इनमें विद्यमान है। इनकी प्रभावोत्पादकता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि कलिकाल में भी प्रभावित करने की क्षमता इनमें विद्यमान है। कालजयी संवाद के रचयिता हैं सूरदास। सूर ने इस प्रश्न पर विचार किया है कि संवाद में वक्ता और श्रोता कैसे होने चाहिए।

उत्तर मध्यकाल संवादहीनता का युग था। भक्त शिरोमणि और कविकुल चूडामणियों ने निर्गुण एवम् सगुण सभी में 'सामान्य मार्ग' से जन संवाद को सम्भव बनाया। कवियों ने सार्थक संवाद के द्वारा तत्कालीन समाज में संवाद का भीतरी रास्ता खोला जिससे बाहर का रास्ता स्वतः खुल गया। कबीर के संवादों में तुलसी से कम चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता नहीं थी क्योंकि वे युग के साथ संवाद कर रहे थे। इसी प्रकार तुलसी ने भी लोक के साथ संवाद किया जिसे सूर ने लोक रंजक माध्यम के रूप में कविता का एक मात्र सार्थक तत्व बना दिया। अतः चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता को लेकर भक्तिकाल के सभी कवियों ने अपने स्तर पर संघर्ष किया। सूर के संवाद भी प्रचलित मत–मतान्तरों के विरुद्ध संघर्ष करते दिखाई देते हैं। संवाद की ये परम्परा युगीन आवश्यकता का परिणाम थी। अतः संवाद एकमात्र काव्य का आवश्यक तत्व हो गया, जिसने साहित्य को अर्थपूर्ण संवाद बना दिया। भक्तिकाल में सभी को मत–अभिमतों के रखने का अवसर इसी माध्यम से प्राप्त हुआ इसी से संवाद साधन न होकर साध्य हो गया। पक्ष–विपक्ष कारगर सिद्ध हुए। रीति–अनीति में विपरीतता का लय हो गया। उलटी रीतियाँ भी संवाद में उतनी सार्थक सिद्ध हुई, जिनका योगदान सूर की चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता में हुआ। सीधा संवाद उलटी रीतियों के माध्यम से सूधे वचनों के औचित्य को सिद्ध करता है, इसे संवादधर्मिता कहते हैं और जिसकी निष्पत्ति युगीन परिस्थितियों एवम् चित्तवृतियों का प्रतिफल है।

सूर ने इस तथ्य को सिद्ध किया है कि सभी विधायें कर्त्ता के व्यक्तित्व और कृतित्व की विधायें हैं। अतः किसी भी विधा के तत्व का अन्य विधा में साध्य के रूप में सृजनात्मक प्रयोग किया जा सकता है। अतः सूर ने नाटक के तत्व के रूप में प्रचलित 'संवाद' का प्रयोग अपने कृतित्व में प्रभावी साध्य के रूप में किया। यही कारण है कि श्रीमद्भागवद के प्रसंग को दोहराने पर भी उनके कृतित्व में पुनरुक्ति दोष उत्पन्न नहीं होता। जिसे सामान्य रूप में पुनरावृत्ति कहा जाता है वह वास्तव में पुनर्रचना होती है। वे संवाद गुण को प्रभावोत्पादकता एवं चरितार्थता का साध्य मानते हैं। संवाद के साध्य मान लेने से संवाद के प्रभाव में होने वाले परिवर्तन पुराने प्रसंगों में अर्थ परिवर्तन का कारण बनते हैं। प्रभावशाली बनाने के लिए जिस अन्तर्दृष्टि एवम् मौलिक सूझ की आवश्यकता होती है सूर का कवि उसका अपने कृतित्व में अनुसंधान कर लेता है। मनोवैज्ञानिकता सूर के कृतित्व में सूर के कवि को अवसर देती है कि वह अपने भीतर प्रसंग की पुनर्रचना कर उसकी चरितार्थता करे। कहने सुनने की अन्तर्बाह्यता संवाद के स्थूल पक्ष को सूक्ष्म बनाती हुई मनोवैज्ञानिक अन्तर्जगत तक पाठक को ले आती है। सूर के संवाद पारिवारिक और सामाजिक जीवन के व्यापक को लेकर चले हैं। संवादों के माध्यम से आलम्बन की रूप प्रतिश्ठा के साथ आषय पक्ष का सम्बन्ध अद्भूत प्रभाव की सृश्टि करता है। अनेक संवाद पद्धतियों को मिलाकर एक अभिनव परास संवाद पद्धति का निर्माण रमणीय उक्तियों के माध्यम से 'सार्थकता की निष्पत्ति' करता है। सूर के संवाद 'रूप वाहक' हैं। प्रभाव प्रदर्शन के लिए संवादों के माध्यम से अनूठे एवम् वैचित्र्यपूर्ण विधानों की योजना महत्वपूर्ण है। अनेकानेक उक्तियों की मार्मिक योजना स्वयं अपने महत्व को सिद्ध करती है।

सूर के कृतित्व के माध्यम से उनका परीक्षण करने पर सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं कि उनका काव्य अर्थपूर्ण संवाद साध्य होने के साथ ही प्रभावी संवाद माध्यम भी है। उनके संवाद अनेक नवीन प्रसंगों की चारुत्वपूर्ण उद्भावना करते हैं। संवादों पर लौकिक संस्कारों का प्रभाव है। गोपालक चराहगाह संस्कृति के अनुरूप संवादों को साध्य बनाकर सूर के कवि ने प्रभावोत्पादकता को उत्पन्न किया है। स्वयं सूर भी कृष्ण के अभिन्न अन्तरंग सखा के रूप में संवादों में सहभागिता करते दिखाई देते हैं। अनेक अद्भुत आयामों का विधान उनके संवादों की विशेषता है। सूरदास पहले गायक थे और बाद में कवि–इसे स्वीकार करने से उनके संवादों में अर्थ की लय संगीतात्मकता से ओत–प्रोत हैं। सीधे प्रभाव की सापेक्षता में परोक्ष प्रभाव का चित्रण भी सूर के कवि ने किया है। ऐसा साहचर्य के भाव के कारण हुआ है। सीधा संवाद परोक्ष प्रभाव को उत्पन्न करता है तथा परोक्ष प्रभाव भी सीधे प्रभाव का ही रूप है। प्रस्तुत के समानान्तर अप्रस्तुत प्रभाव भी सूर के संवादों की विशेषता है। संवाद प्रभाव को पल्लवित करते हैं और सहजता में अद्वितीयता रसात्मक संवादों की योजना में सूर समर्थ सिद्ध हुए हैं। प्रवाह तारतम्य एवम् तादात्मय को बनाये रखते हैं जिससे चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता सम्पूर्ण कृतित्व से आत्मरूप हो जाती है। संवादों में उत्तर मध्यकाल की प्रदत्त परिस्थितियों की आलोचना विद्यमान हे। यही कारण है कि सूर के संवादों में अनेक परिपार्श्व निहित हैं। सूर के संवाद बोध प्रणाली की उपज है। मति संचारीभाव सदैव क्रियाशील रहता है। कृष्ण का सन्देश लेकर आये ऊद्धव सीधे संवाद के प्रयोक्ता है किन्तु प्रत्युत्तर में उद्धव–गोपी संवाद का परोक्ष प्रभाव ब्रज से निकलकर मथुरा तक अर्थसंचार को सम्भव बनाता है। संवाद का क्षेत्र कहीं भी हो किन्तु परोक्ष प्रभाव का क्षेत्र ब्रज न होकर मथुरा ही है। मति एवं स्मृति संचारी भाव इसे सहज बनाते हैं। चित्तवृत्तियों के प्रकाश की प्रक्रिया संवाद के विधान में अचूक प्रभाव की निष्पत्ति करती है। सूर के संवाद संदेश–सूचनाओं का आदान–प्रदान भर नहीं है। संवादों में निहित व्यंग्य परोक्ष प्रभाव की निष्पत्ति में अहम् है। सूर ने सिद्ध किया है कि काव्य का मुख्य तत्व संवाद ही है। जिससे सार्थकता एवम् अर्थवत्ता प्राप्त और सम्प्रेषित होती है। संवाद कृष्ण से साक्षात्कार कराने का माध्यम होने के

साथ–साथ आत्मसाक्षात्कार के माध्यम भी है। 'बतरस' प्रभावोत्पादकता एवम् चरितार्थता तक पहुँचने का सशक्त माध्यम है। मुरली प्रसंग को भी संवाद ही मानना चाहिए, जिससे एक अद्भुत सम्मोहन प्रभावोत्पादकता को उत्पन्न करता है। ऊद्धव–गोपी संवाद सीधे संवाद का उदाहरण है जिसकी पृष्ठभूमि में कृष्ण के वचन ऊद्धव के प्रति निहित संवाद सीधा संवाद है। संवाद कृतित्व का मूल है। प्रभावित करने ओर प्रभावित होने की प्रक्रिया बहुमुखी संवाद द्वारा स्वयं सम्पन्न होती है। ईष्ट के साथ किया गया संवाद कृतित्व में चरितार्थ होकर अभिष्ट की सिद्धि करता है। महत्व तत्व को चरितार्थ करने में सूर सफल हुए हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। जिस प्रकार एक बीज से दूसरे बीज का निर्माण फलागम को प्राप्त करता है उसी प्रकार की सतत्ता सूर के संवादों में विद्यमान है। विसर्ग की क्रियाओं का प्रभाव प्रभावोत्पादकता का आधार है। सर्ग–विसर्ग संवाद के हेतु हैं।

जिसका प्रभाव गोपी–कृष्ण संवाद के रूप में मथुरा लौटने पर 'ऊद्धव के वचन कृष्ण के प्रति' तक क्षितिज विस्तार करता है। यही संवाद का त्रिकोण है प्रभाव का नेटवर्क भी। मथुरा से ब्रज आकर पुनः ब्रज से मथुरा लौटता है। अन्तर्तान की इस योजना में चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता में वैशिष्ट्य उत्पन्न होता है। मन, वचन, कर्म का यह त्रिकोण संवाद की सीमा न होकर सामर्थ्य है। इसके लिए सूर ने जितने साम्ययोजित किये हैं वे भी संवाद व्यापार में अद्भुत एवम् अनूठेपन की सृष्टि करते हैं। संवाद के आरोह–अवरोह में विराम तब आता है जब सूर का कवि 'कुछ कहत न आवे' अथवा 'कुछ बरनि आवे' तक पहुँचकर असमर्थ हो जाता है। कवि की असमर्थता भी प्रभावोत्पादकता में कमी नहीं होने देती। सम्मुख संवाद बहुमुखी होकर ऊद्धव कृष्ण एवम् गोपियों के बीच गोपी भाव की सृष्टि करते हुए संवाद के त्रिकोण को निर्मित करते हैं। यह निर्माण त्रिआयामी होने के साथ बहुमुखी प्रभाव की सृश्टि करता है। 'टैलीपैथी' भी संवाद के प्रत्युत्तर में संवाद कर देती है। सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं कि सूर चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता के कवि हैं। संवाद–रीतियों के द्वारा वे रस रीतियों की योजना करते हैं। ये उल्लेखनीय हैं कि पुनरावृत्ति एवम् पुनरुक्ति का दोष सूर के सन्दर्भ में प्रभावोत्पादकता की हानि नहीं करता अपितु पुनरावृत्ति भाव पर बल देकर संवाद में अर्थबल की सृष्टि करती है। उद्धव और गोपियां संवाद की चाल को पहचानते हैं और इसी से सन्देश में उत्तर प्रत्युत्तर की श्रृंखला बनती है। भ्रमर का प्रसंग संवाद माध्यम को और भी सशक्त बना देता है। 'बादी बचन' 'योजना' एवम् अर्थ कुटिलता से युक्त 'बतियाँ' सन्देश में निहित अन्तर्कपट का उद्घाटन कर देती है। जिससे संवाद सहज एवम् सरल हो जाते हैं। हरि मुख से निकला सन्देश उद्धव के मुख से निकल कर भ्रमर पर आरोपित होता हुआ गोपियों के मुख से पुनः उद्धव के मुख में होता हुआ हरि मुख में विश्राम लेता है। संवाद में प्रस्थान बिन्दु से विश्रान्ति तक की अन्तर्यात्रा प्रभाव के नेटवर्क को अथाह क्षेत्र तक ले जाती है। अतः सूर के संवाद बुद्धि विवेक पर आधारित वचन चातुर्य के उदाहरण मात्र न होकर कृष्ण के गोपियों के प्रति दिये गये वचन की लाज को कसौटी पर कसने के माध्यम हैं और यही चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता का अव्याख्य क्षेत्र है।

भक्तिकाल में महात्मा सूरदास ने जो कुछ ग्रहण किया उसे ही संवाद के माध्यम से युग के समाज को वापस लौटाया। आदान–प्रदान का यह भाव ही संवाद में बहुलता एवम् उभयपक्षीयता को चरितार्थ करता है। वस्तुतः विपर्ययों के समाधान का यही एक रास्ता है। वाणी का सेवन करते–करते भी अतिरिक्तता के भाव का बना रहना ही न समाप्त होने वाली चरितार्थता का उदाहरण है। बल्लभाचार्य से प्राप्त शब्द ब्रह्म का ज्ञान ही सूर के संवाद में तत्व ज्ञान बनकर प्रकट हुआ है। यही उनके कृतित्व में निहित अन्तःक्रियात्मक शक्ति है। अद्भुत को आत्मसात् करना, वैत्रित्र्य के साथ प्रकट करना रचनात्मक ऊर्जा से ही सम्भव है, जिसकी चरितार्थता सूर में स्वतःप्रेरणा से हुई है। संवाद वर्णन मात्र न होकर बोध कराने वाले माध्यम हैं। निषेध में निहित तात्पर्य की पड़ताल करके निषेध को सिद्ध करना सूर के कृतित्व का मौलिक गुण है। वे निषेध के मूल को लखा देते हैं, जिससे निषेध की सिद्धि स्वयं हो जाती है और उद्धव एवम् गोपियों के संवाद में निरुत्तरता व्याप्त हो जाती है। इस प्रकार निषेध के आधार का खण्डन सूर के संवादों में निहित है। इसे संवाद की सूत्र आत्मा कह सकते हैं। अतः संवाद भगवान कृष्ण द्वारा उद्धव को दिये गये उवाच से निश्पन्न कर्मयोग से कम नहीं है। संवाद में कपट एवम् छल–छद्मजन्य वक्रता भी सरलता में रूपान्तरित हो जाती है। संवाद योजना कैसी भी की गयी हो किन्तु प्रभाव योजना सहज बनी रहती है। सूर की रचनाधर्मिता से निर्मित यह रचना विधान अपने आप में चरितार्थता का अद्भुत उदाहरण है। सूर के संवाद में वाक् युद्ध का विधान अपने आप में चरितार्थता का अद्भुत उदाहरण है।

संवाद को साध्य बनाने में सूर का कवि इसीलिए सफल सिद्ध हुआ है क्योंकि वह स्वयं से अथवा प्रसंग से संवाद करने में सक्षम एवम् समर्थ सिद्ध हो सकता है। सूर इस कसौटी पर खरे उतरते हैं और इसीलिए वे प्रभावोत्पादकता में अद्भुत वृद्धि करते हैं। कृतित्व को साकार करने की क्षमता पर ही उसकी प्रभावोत्पादकता निर्भर करती है। इस प्रकार किसी भी प्रसंग में अपने कृतित्व को जीने का फल उसकी प्रभावोत्पादकता को सुनिश्चित करता है। संवाद उनके कृतित्व की ऊर्जा है। किसी प्रसंग को लेकर कृतित्व की ऊर्जा से नवीन रूप देकर उस एक प्रसंग से अनेक प्रसंगों की उद्भावना करने की शक्ति उन्हें अन्य कवियों से पृथक कर देती है। भक्तिकाल में चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता का जो भी भीतरी संसार रहा हो सूर के कवि ने उसके भीतर नई उद्भावनायें की हैं। उनके विशय में ये निष्कर्ष खण्डन के योग्य हैं कि उनमें वस्तु संकोच पाया जाता है क्योंकि संवाद सतत संवाद की श्रृंखला द्वारा वस्तु–संकोच उत्पन्न करने का अवसर ही नहीं देता। सूर के कृतित्व की सीमाओं को निश्चित करना सम्भव नहीं है। क्योंकि उनके संवाद सीमाओं को तोड़कर प्रभावोत्पादकता को नवीन रूप देते हैं। उनके संवाद अन्तःकरण की क्रिया शक्ति से सदा सर्वदा सम्पन्न हैं। स्वतःसिद्धता के साथ स्वयं प्रकाश्यता उनमें विद्यमान है। क्रीड़ा करने की क्रिया से कर्म संस्कार

को जगाने में सूर दक्ष हैं। संवादों में वैचित्र्य इस कारण है क्योंकि मतियों की भिन्नता के कारण ही एक मत के साथ दूसरे तक का संवादों में होने वाली चरितार्थता मतों से परे है। सूर का कवि संवादों में संयोग और कार्य–कारणता के महत्व को समझता है। इस प्रकार सूर ने अपने कृतित्व में संवाद की सत्ता को चरितार्थ किया है। उनका व्यक्तित्व संवाद से युक्त है जिसकी चरितार्थता कृतित्व में संवाद के रूप में प्रकट हुई है। उनके संवाद भ्रामरी का निराकरण कर संकटा को सिद्धा में बदलने वाले हैं। अन्तःसाक्ष्य एवं बाह्यसाक्ष्य का समाहार उनमें निहित है। श्रीमद्भावगत में नौ योगीश्वरों का संवाद सुनाने से ही सम्भवतः सूर के संवादों में श्रोतव्यता का समावेश हुआ है। सूर संवाद के महात्मय को पहचानने की क्षमता रखते हैं क्योंकि यही उनके लिये कृतित्व की मुक्ति की साधना के साथ मुग्धता के द्वारा मुक्त होने का माध्यम भी है। श्रीहरि के श्रीमुख से निकले वचनों को धारण करने की शक्ति के सर्जनात्मक प्रयोग द्वारा अव्यक्त को व्यक्त करने का वैचित्र्य भी सूर का संवाद है। सरल से सरल सीधे संवाद–धर्म का निर्वाह ही सूर के कवि को कर्त्ता बनाता है। सूर कवि ने 'भारतीय वाङ्मय के मुकुटमणि श्रीमद्भागवत' में प्रष्न पूछने एवम् उत्तर देने की सतत शृंखला को संवाद शृंखला में रूपान्तरित किया है। भागवत समुद्र में प्रवेश करके सूर ने साक्षात् संवादों को कथन एवम् श्रवण का साध्य बनाया है। यह मात्र श्रवण का विधान नहीं है। सूरसागर 'साहित्य का साररत्न' है। अर्थात् भागवत् के सार भाग को संवाद की पद शैली में रूपान्तरित करना सूर की सामर्थ्य का द्योतक है। सूर के संवाद भी प्रभावोत्पादकता के स्तर पर उज्ज्वल फल को संचालित करने वाले हैं। युगीन संशयो की निवृत्ति भी संवादों के द्वारा हुई है। पदान्त में स्वयं सूर का कवि के रूप में उल्लेख संवाद में सूर की वास्तविक सहभागिता को प्रकट करता है। दशम स्कन्ध राजा परीक्षित के पूछने और सूत जी एवम् शुक द्वारा उत्तर देने से आरम्भ होता है। सूर के संवाद अन्तःकरण की शुद्धि के साथ समष्टि की शुद्धि के प्रभाव को उत्पन्न करते हैं। सूर में संवाद का आविर्भाव होता है। संवाद सूर के लिए साध्य पद्धति है। संवादों के प्रकट होने से सिद्ध है कि सूर संवादों को धारण करते हैं। संवाद साहचर्य से उद्धव और गोपियों का हृदय निर्मल होता है। वक्रता का सौन्दर्य नई अर्थवत्ता को प्राप्त करता है। जन्मांध सूर में संवाद के आविर्भाव की प्रक्रिया अव्याख्या की प्रक्रिया में निहित है अर्थात् भावों की पुष्टि में संवाद साध्य है। चित्त का प्रक्षालन एवम् मल एवम् कंचकों को धो डालने की क्षमता संवाद आराधना के द्वारा ही सम्भव हुई है। उनके संवादों में स्वार्थ सिद्धि के महत्तम स्वरूप का चित्रण हुआ है। सन्दर्भ और प्रसंगों का उद्धार करने में संवादों का योगदान महत्वपूर्ण है। सूर साधन को साध्य बनाने में सफल हुए हैं। प्रत्येक संवाद में श्रीविग्रह का संस्पर्श आद्योपान्त विद्यमान है। संवाद में बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव से अनेक प्रतिबिम्ब अर्थ छायाओं की सृष्टि करते हैं। साधन सिद्दा पद्धति का अनुसंधान सूर के कवि ने अपनी रचनाधर्मिता में किया। संवाद में नित्यश्रद्धा गोपियाँ श्रुति रूपा हैं और इसीलिए उनके भीतर निष्पन्न संवाद का फल उद्धव के चरित्र में स्वयं चरितार्थ हो जाता है। दिव्य रस में विहार की चेष्टायें सजीव हुई हैं। ब्रह्म विद्या की प्रेरणा से संवाद विद्या की चरितार्थता जन्मांध सूर में हुई है। स्वयं सूर का विश्वास है कि उनके संवाद अन्तर जाने के प्रयास हैं। वर्णन और चित्रण में चरमोत्कर्ष आने पर संवाद कंठ को अवरुद्ध कर देता है किन्तु अध्याहार संवाद में अवसर देता है कि उसे अनिवर्चनीय अर्थ तक ले जाया जाये। मुख के द्वारा हृदय में धारण करना और पुनः मुख द्वारा प्रकट कर देना सूर की संवाद प्रक्रिया है। जहाँ श्रुतियाँ और शास्त्र मौन हो जाते हैं वहाँ सूर की उद्भावना शक्ति सनातन मौन को सार्थक करती हुई अर्थवत्ता का विधान करती है। वचनों से जगाने की प्रक्रिया उनमें बराबर बनी रहती है। अतः उनके संवादों में आदि शक्ति विद्यमान है क्योंकि कवि–कार्य ही संवाद करना है और सूर के कवि ने इसे अपने कृतित्व के माध्यम से आगे बढ़ाया है क्योंकि संवाद का कभी अन्त नहीं होता। अतः सूर अनादि संवाद के प्रवर्तक हैं। दर्शन की दृष्टि से उनके संवाद पाप–ताप को बहाने वाले, दोष मिटाकर मायामल को नष्ट करने वाले हैं। उनके संवादों में अखण्डता बराबर बनी रहती है। श्रवण, वर्णन, संस्मरण आदि संवाद की प्रभावोत्पादकता के उदाहरण है। नेति–नेति का दर्शन निशेध में भी शेष अर्थ को व्यक्त करता है।

सूर ने संवाद योजना में उद्धव तथा गोपियों की बातचीत की प्रेरणा से ही अनेक संवादों की रचना की है। गोविन्द का मथुरा में रहना, अक्रूर का माधव को ब्रज से मथुरा राजकाज हेतु ले जाना, श्रीकृष्ण की निश्चित की गयी अवधि में न लौटना, अनेकों सन्देश भेजने के पश्चात् भी उनका प्रत्युत्तर न देना मथुरा में रहकर अपने सखा उद्धव को अपना सन्देश देकर भेजना, उद्धव का हृदय परिवर्तन कर वापस लौटने की कथा संवाद का मुख्य आधार है। सूर के संवाद क्रीड़ा भाव से तन्मय होकर लिखे गये संवाद हैं। बुद्धि की विकलता के साथ हास्य–विनोद की गम्भीरता, हास–परिहास सन्देशों में आत्मीयता एवं गोपनीयता का विधान करते हैं। श्रीमद्भागवत् में श्रीकृष्ण–रुक्मणी संवाद से भिन्न उद्धव–गोपी संवाद है। संवाद योजना से भक्त शिरोमणि का उद्धार होने के साथ जीवात्मा स्वरूप गोपियों का भी उद्धार हुआ है। संवादों में बियाज (ब्याज) ओर दूतों की उपस्थित के स्थान पर स्वयं को रखकर देखने की प्रवृत्ति से अर्थपूर्ति सरलता से ही जाती है। संवादों का प्रयोजन है ऐश्वर्य की प्राप्ति। कृतित्व निर्माण शक्ति का प्रमाण है संवाद, और यही चरितार्थता और प्रभावोत्पादकता का प्रतिफल है। स्फोट ओर स्फुरण से युक्त हैं संवाद। प्रकाशिनी शक्ति उनमें निहित है। युक्ति–युक्तता उनमें संगीत का विधान करती है। जिससे तारतम्य एवं तादात्मय बना रहता है। सूर ने सिद्ध किया है कि व्यंग्य, विरोध, वक्रोक्ति, उपालम्भ, हास परिहास में संवाद परियोजना द्वारा कितने प्रकार के अर्थ वैचित्र्य को उत्पन्न किया जा सकता है। व्यक्त–अव्यक्त अर्थ गूढ़ता के साथ संवाद में अर्थ का उत्कर्ष करता है।

एक बोली को देश भाषा बनाकर उसमें संवाद रचना करना उनके युग में चुनौती पूर्ण था। अतः उनके संवाद ब्रजभाषा के रुप को खड़ा करने में समर्थ हैं और अवधी की प्रतियोगिता में संवाद की भाषा सिद्ध करते हैं।

जिस कवि के हृदय में भाव धारा वेग से प्रवाहित होती है उसके कृतित्व में संवाद का वेग भी उतना ही अप्रतिहत होता है। भाव को उमड़ने के साथ ही संवाद का प्रवाह स्वयं निर्मित हो जाता है। यही द्रुत गति संवाद के वेग को अबाध रूप में सम्प्रेषित करती है। इन संवादों में सम्प्रेषण की शक्ति जितनी अधिक है, आकर्षण की उससे कम नहीं है। इससे सूर में अर्थ ग्रहण करने की प्रक्रिया में कोई मतमतान्तर नहीं रहता। हृदयगत भावना क्योंकि निराकार होती है जिसे कवि साकार करता है। इस प्रकार सूर में निराकार को साकार करने की प्रक्रिया दिखाई देती है। अमूर्त को मूर्त बनाने का यह भाव उसके कृतित्व में चरितार्थ हुआ है। अर्थ को गढ़ने के जितने अधिक अवसर कवि के कृतित्व में होंगे उतनी ही वाच्य सम्भाव्यता संवादों में विद्यमान होगी। उद्भावना को पकड़ कर इसका अवलोकन किया जा सकता है। यह वाग्विदग्धता भी हो सकती है और वाक्छल भी। सूर के कृतित्व में अर्थ निबन्धना एवम् विरोधाभासों का सौन्दर्य विद्यमान है। वैशम्य किस प्रकार साम्य की सृष्टि करता है यह वैचित्र्य सूर के संवादों की सम्पदा है। भीतर का क्रीड़ा भाव बाहर प्रकट होकर कृतित्व को चरितार्थ करता है जिस कारण अन्तर्बाह्य एक समान होते हैं। हृदय पक्ष और कला पक्ष का रंजक सम्बन्ध संवाद में विद्यमान है। भाव परायणता सूर के कृतित्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। जिसमें चर एवम् अचर को प्रभावित करने वाली प्रभावोत्पादकता निहित है। प्रचलित अर्थ का अतिक्रमण करने से प्रभावोत्पादकता में अद्वितीयता स्वतः निहित हो जाती है–

"उर में माखन चोर गड़े
अब कैसेहु निकसत नाहिं ऊधौ तिरछे ह्वैजु अड़े।।[3]

जो वस्तु गड़ जाती है उसका निकलना कठिन है अन्तर्निहित की तलाश करना एवम् गढ़े को निकालने का कार्य एक वाक्य के संवाद से सम्भव हुआ है। संवाद हृदय की गहराई में जाकर पुनः धरातल पर लौटता है। यह अद्भुत रचनाधर्मिता है। गोपियाँ तर्क द्वारा कहती है कि जो वस्तु अन्दर जाकर तिरछी हो जाये उसका निकलना और भी कठिन है यहाँ गढ़ने का प्रचलित अर्थ नहीं लिया जा सकता गढ़ने का अर्थ है गोपियों के हृदय पर कृष्ण सौन्दर्य के अतिशय प्रभाव का पड़ना। परन्तु सूर के लिखने का इतना ही तात्पर्य नहीं है सूर तिरछे होने की बात कहकर यहाँ कृष्ण की त्रिभंगी मुद्रा की ओर भी संकेत कर रहे हैं। इसी प्रकार सामान्य अर्थ निबन्धना द्वारा गोपियों के गौर वर्ण का श्यामल हो जाना भी व्यंग है। यह कथन वाक्छल में परिणित होता है।

सूर ने सिद्ध किया है कि आन्तरिक एवम् बाह्य भावों की अभिव्यक्ति के लिये जिन माध्यमों का आश्रय लेना चाहिए उनमें संवाद सर्वोपरि है। हृदयगम कर उसकी गूढ़ता का मन्थन करते हुए सरल रूप में प्रस्तुत करना इसी कारण सम्भव हुआ है। संवाद पूर्वापर अविच्छिन्न परम्परा का निर्वाह मात्र न होकर नवीन उद्भावना की निष्पत्ति के कारक हैं। सूर ने संवाद का साध्य के रूप में प्रयोग कर साधनों की विभिन्नताओं को दूर करने का पथ प्रशस्त किया है। अन्तःसाधना के द्वारा मानव मात्र में निहित संवाद की वृत्ति का सर्जनात्मक प्रयोग सूर के कवि ने किया है। वार्त्ता साहित्य के समानान्तर संवाद साहित्य का सृजन करने में सूर का योगदान महत्वपूर्ण है। 'तत्व' और भेद को आत्मसात् कर उसे संवाद में चरितार्थ करने का कार्य सूर के कवि ने किया है। भागवत् के दशम स्कन्ध में नब्बे कथाओं के वर्णन में संवाद में कहने का प्रयास करने में सूर समर्थ सिद्ध हुए हैं। संवाद सर्जन करने में जिस कुशाग्रता की आवश्यकता होती है, वह सूर में विद्यमान है अभिव्यक्ति हेतु किसी भी कवि में संवाद करने की क्षमता उसी अनुपात में होती है जिसमें वह संवाद कर ग्राह्यता को सम्भव करता है। सरलता एवम् बोध–गम्यता साध्य के साथ कवि की तन्मयता पर निर्भर होती है। श्रवण से लेकर आत्मनिवेदन तक भक्ति के साधन संवाद के साधन भी हैं। सुनने–सुनाने की प्रवृत्ति से महात्मय की प्राप्ति होती है। जिस पर संवाद की सफलता निर्भर रहती है। पाठ श्रवण के इस रूप में अर्थात् निष्पत्ति में सूर सफल सिद्ध हुए हैं।

संवाद के बल से सूर के कवि ने अपनी उद्भावना शक्ति को प्रकट किया है। साधारण मुरली का प्रसंग भी मुरली की तान के रूप में सार्थक संवाद का प्रसंग है। सूर वर्णनसिद्ध कवि हैं, अर्थपूर्ण संवाद इसीलिए उनकी समृद्धि और ख्याति के कारण हैं। वाणी व्यापार को गति देने का कार्य भी संवाद संभव करते हैं। अन्य कवि जिसे कहने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं, सूर की सामर्थ्य वहाँ से प्रारम्भ होती है। उनके संवाद विपरीत अर्थों में भी सामंजस्य की स्थापना करते हैं। भावों के उमड़ने से प्रवाह जितना अधिक विस्तृत होता है, उतना ही संवाद का प्रवाह अर्थ को बहुआयामी बनाता है। इस प्रकार उद्भावना शक्ति ही उनके काव्य में चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता की हेतु है। प्रसंग को सभी पार्श्वों में देखना, नाना उक्तियों का समावेश करना उनके संवादों में भी विद्यमान है। इसी अर्थ में संवाद एक विचित्र मार्ग को निर्मित करते हैं और कथन की वक्र विधा के रूप में रूप के कृतित्व में विद्यमान हैं। उनके संवाद मणिकांचन संयोग से निर्मित हैं। जिसमें महात्मा सूरदास, भक्त शिरोमणि कृत सूरसागर है। हृदयगम्य कर उसे बोधगम्य बनाने का प्रकार्य स्वयं संवाद को निर्मित होने का अवसर देता है। स्थूल को स्पष्ट करने के लिए सूक्ष्म विधान भी सूर के कवि ने किया है। स्थूल द्वारा सूक्ष्म को प्रकट करना, सूक्ष्म द्वारा स्थूल को। सूक्ष्म को प्रकट करने वाले कथ्य को संवाद द्वारा सम्प्रेषित किया है। उक्ति विधाओं की योजना करने में भी सूर अद्वितीय हैं। जब भाव–वैभव अपार हो तब उसी अनुपात में उसे प्रकट करने वाला संवाद भी तद्नुसार होना चाहिए, जैसा कि सूर ने किया है। संवाद में गेयता एवम् संगीतात्मकता का समावेश सूर के कवि ने किया है। वाग्बल एवं वाग् विलास सूर के संवादों में असाधारणता का विन्यास करता है। उनका कृतित्व काव्यात्मक अनुवाद मात्र न रह जाये, इसके लिए उन्होंने प्रसंगों की पुनर्रचना कर संवाद में उनकी उद्भावना की है।

संवाद काव्यार्थ को प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण हैं। चित्रण बाहुल्य उनमें विद्यमान है, साहचर्य भाव निहित है। चेष्टाओं, गतियों तथा क्रियाओं का अबाध चित्रण चित्रात्मक रूप से हुआ है। दृष्य चित्र के साथ गति चित्र भी विद्यमान है जो आभ्यंतर मनोगति का रूपान्तरण है।

भावचित्रों को निर्मित करने में संवाद उतने ही कारगर हैं। वस्तुचित्र, गतिचित्रों में अनिवर्चनीय भाव धारा को बहाने में उनकी संवाद साधना सफल सिद्ध हुई है। चित्त–द्रुति के कारण हृदय का विस्तार उनके संवादों में भी द्रवणशीलता द्वारा अर्थ विस्तार करता है। यही कारण है कि उनका संवाद 16 (सोलह) सहस्र गोपियों तक प्रवाहित होता है। संवाद की श्रुतियाँ भी तद्नुसार हैं। उनके संवाद प्रसंग के अनुसार कम भाव के अनुसार अधिक हैं। अर्थात् भाव के अधीन हैं। सूर के संवाद उस जहाज के पंछी के समान हैं जो अपने स्थान से जाकर पुनः उसी स्थान पर लौटकर आ जाता है। भाव को सर्वोपरि मानने से संवाद की प्रेरणा का आधार यही भाव है। भाव योजना के साथ भाव को पुनः प्राप्त करने में सूर दक्ष हैं। एक प्रकार का सायुज्य का प्रभाव संवादों में बना रहता है। सूर ने इस तथ्य को खण्डित किया है कि कवि का मानस एक समय में एक ही बात पकड़ पाता है। उनके संवादों में लक्ष्यबद्धता के पार जाकर उस पार अर्थ में उत्कर्ष को सिद्ध करने की शक्ति निहित है। हृदयरूपी सरिता के प्रवाह के साथ अर्थ का प्रवाह भी उनके कृतित्व में चढ़ता ही जाता है। अर्थ के तटों को तोड़कर सब कुछ को बहा ले जाता है, यही संवादजन्य प्रभावोत्पादकता है। संवादों में अपना प्रवाह है जो प्रचलित प्रवाह–बहाव को पलट कर सब कुछ को बहा ले जाता है। अश्रुओं के प्रवाह से अर्थ प्रवाह की समानता देखते ही बनती है उद्भ्रान्त उक्तियों की योजना भी संवाद सौरस्य को बनाये रखती है। उनके संवाद हृदय का कोना–कोना झांक आये हैं–यह कथन आज भी उतना ही सार्थक है। उनके संवाद इसीलिए सर्वग्राही हैं क्योंकि वे सहृदयता के आधार पर पुनर्रचना करने में समर्थ है। उनके संवादों में बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव हैं। अर्थ संश्लेषण की प्रक्रिया इनमें विद्यमान है। अनेकानेक अर्थ संभावनाओं को उत्पन्न करने में भी संवाद उपादेय है। एक भाव चित्र में बहुमुखी भाव चित्रों की योजना और अनेक भाव चित्रों को मूल भावचित्र में समाहित करने की प्रवृत्ति सम्यक् अर्थ योजना को उत्पन्न करती है। अतः संवादों में अनेक भावों का कायाकलप करने की शक्ति विद्यमान है। नित नूतन रूप को बाँधने में सूर का कवि सफल हुआ है। यह प्रचलित भाव क्षेत्र में नये भाव क्षेत्रों का अनुसंधान है। नूतनता एवम् अभिनवता को पहचानने की यह सामर्थ्य सूर में मनोवैज्ञानिक होने के कारण सम्भव हुई है। भावों की सीमा को बाँधने में विफल सूर उन भावों को संवादों में अन्तिम रूप से बाँधने में उतने ही सफल है। संवाद साधना में स्वयं को खोकर भाव को पाने एवम् स्वयं को संवाद में समर्पित करने की प्रवृत्ति सूर को विलक्षण बनाती है। कविता के प्रचलित विधान को संवाद योजना द्वारा उलटने की शक्ति सूर में निहित है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। भावों का उच्चाटन करने में संवाद सक्षम हैं। भाव–भर्त्सना भी सकारण की गई है क्योंकि उसमें से भाव जगत् की निष्पत्ति होती है। इस प्रकार कथ्य के विचित्र प्रकारों को विकसित करने के लिए संवाद साध्य है। जिससे एक ही बात को अनेक रूपों में कहने की अर्थात् कथ्य की सम्पूर्णता एवम् समग्रता को पाने की शक्ति से ओत–प्रोत हैं सूर।

सूर के संवाद कृतित्व में सम्बन्ध भावना की निष्पत्ति करते हैं। भावों को साधने में और उन्हें व्यक्त कर पाने में महत्वपूर्ण हैं। भाव चित्रों को भावोद्रेक द्वारा प्रकट करने में कारक भावों के अनुसार ही संवाद योजना की गई है। जिनमें वैविध्य है और समुच्चय भी। एकांगी चित्रण को दूर करने में सहायक हैं। भाव–सम्राट होना ही पर्याप्त नहीं है अपितु भाव चित्रण के माध्यम का प्रयोग करने में भी निपुणता होनी आवश्यक है। संवादों में अनेक भावों का सम्मिश्रण हुआ है। भक्तिकाल में जो भाव धारा प्रवाहित हुई उसका उत्कर्ष सूर के संवादों में हुआ है। रस–रीति और लोक–लीक के अनुसार संवाद सर्जन किया है। भाव सागर को अथाह बनाने में लीक और रीति की चरितार्थता स्वयं हुई है। इस प्रकार सूर एक अदम्य तथा अप्रतिहत प्रभाव की सृष्टि करते हैं। पुरातनता में नवीनता का अनुसंधान करना उद्भावना शक्ति के कारण ही सूर में संभव हुआ है। हृदय की विशालता ने संवाद में भाव क्षेत्र को व्यापक बनाया है। पुष्टिमार्ग के जहाज सूर के संवाद इसे पार से उस पार तक के अर्थ संसार को चित्रात्मक बनाते हैं।

युग के प्रति उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए सूर ने संवाद साधना कर उस काल में हिन्दू जाति को बल और ओज प्रदान कर उन्हें प्राण दिये हैं–यह संवादधर्मिता का युगीन प्रकार्य है। युगीन झंझावातों एवम् संघर्षों के सहज समाधान को मध्यकालीन जन के चित्त में प्रेशित करने का कार्य सूर के कवि ने किया। उनके संवाद 'घिघियाने' की निष्पत्ति न होकर युगीन चेतना की निष्पत्ति हैं। दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका में से संवाद साहित्य का निर्माण करने में सूर समर्थ सिद्ध हुए। अविद्या को दूर करने का प्रयास भी सूर ने किया। प्रवाहित होने वाली अनेक अजस्र धाराओं को संवाद में परिणत करने का प्रयत्न सूर ने सफलता पूर्वक किया जिससे संवाद साहित्य की पावन धारा प्रवाहित हुई। युग में संवाद द्वारा मध्यकालीन चित्त को साधने की आवश्यकता थी, जिसका अनुभव सूर के कवि ने किया। इस प्रकार पूरे युग को चरितार्थ कर युग से संवाद कर, पूरी जाति से संवाद कर सूर के कवि ने प्रभावोत्पादकता को महत्व दिया। पोशण को ही पुष्टि के रूप में चरितार्थ करते हैं। सूर का कविकर्म कार्यव्यूह की रचना करता है जिससे साधन को साध्य बनाना सहज हुआ है। प्रभावोत्पादकता जितनी प्रत्यक्ष है उतनी परोक्ष भी। प्रत्यक्ष में जितनी अर्थ सिद्धि है उतनी ही व्यंगसिद्धि भी। एक से अनेक होने की भावना के परिणाम स्वरूप कृतित्व में भी नानारूपों में प्रकट होने का भाव संवादों द्वारा हुआ है। इस प्रकार सूर संवाद की सत्ता के कवि है। संवाद कृतित्व में प्रवेश के मुख्यद्वार हैं। जिनसे किसी भी कवि के कृतित्व की चरितार्थता की पड़ताल की जा सकती है। संवादों का सर्जन मौलिक अनुभूति के आधार पर किया गया है। 'सूर सारावली' में कृष्ण और रुक्मिणी का संवाद सूर के लिए मौलिक प्रसंग है। 'साहित्य लहरी' में प्रसंगों का चित्रांकन भी उतना ही मौलिक है। युग–युग से चली आती हुई परम्परा के निर्वाह में होने वाले परिवर्तनों के कारण कृतित्व के संवाद में जो अन्तर आता है, यही कृतित्व की मौलिकता है।

सूर के संवादों में भाव चित्रों के निर्माण के पीछे अन्तर्दृष्टि एवम् मनोविज्ञान भी है। सूर हृदय संवादी कवि है। एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव की सृष्टि करने में सूर के प्रज्ञाचक्षुओं का महत्वपूर्ण योगदान है। मानस पटल पर बने चित्र के आधार पर संवाद के निर्मित होने की प्रक्रिया उसमें निहित मनोवैज्ञानिक प्रभाव को ग्रहण करने की आवश्यकता बल देती है। हृदय से हृदय का संवाद और मानस का मानस से संवाद प्रभावोत्पादकता को सूक्षम बनाता है। क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं की सत्ता से निर्मित संवाद का मनोविश्लेषण करने पर कृतित्व में चरितार्थ होने वाले मनोवैज्ञानिक प्रभाव को ग्रहण किया जा सकता है। इस दृष्टि से सूर संवाद रहस्य के कवि हैं। क्योंकि वे जिज्ञासा की मूल प्रवृत्ति को जाग्रत करते हैं। अतः स्पष्ट है कि अभिव्यंजना के क्षेत्र में किया जाने वाला कोई भी नया प्रयोग मनोवैज्ञानिक आधार के बिना मूल्यवान नहीं होता। सूक्ष्म मानसिक अनुभूतियों को प्रेषित करने के लिए सूर का कवि संवाद की मनोसाधना भी करता है क्योंकि मनोदशाओं का चित्रण सूर में विद्यमान भावातिरेक प्रबलता के कारण अलौकिक अर्थों की निष्पत्ति करता है। अतः संवाद की एक अलौकिक सत्ता भी है क्योंकि मनुष्य का आदि स्वभाव संवाद करना है और सूर ने इसी संवाद को कृतित्व का साध्य बनाया है।

निष्कर्ष

भाव–चित्रण की मनोवैज्ञानिक आधार भूमि संवादों को भी मुक्त विचार–प्रवाह प्रदान करती है। भाव विह्वल सूर द्वारा मार्मिक प्रसंगों की योजना में मानसिक क्रिया व्यापार द्वारा मनोविज्ञान के विभिन्न पक्षों का चित्रण सूर के कवि ने किया है। कृतित्व बाहर चित्रित होने से पहले कवि के भीतर चित्रित होता है और उसकी प्रस्तुति संवाद को मनोवैज्ञानिक आधार देती है। सूर के संवाद मनोवेगों के संवाद हैं। संवाद चेतन अथवा अचेतन के साथ भावात्मक संबंध को निर्मित करते हैं। अनेकार्थकता की छाया एवं प्रतिबिम्बों का निर्माण सूर के कवि ने किया है। भाव के सम्प्रेशण एवम् उत्तेजना में सहायक है संवाद। उनके संवाद मनोवैज्ञानिक चित्रण के द्वारा अद्वितीय हैं। अनेक भाव–चित्रों का सम्मिश्रण सूर में विविधमुखी प्रभावोत्पादकता को उत्पन्न करता है। भाव सबलता का चित्रण भी सूर के कवि ने अनूठे रूपों में किया है। मानसिक क्रियाओं के प्रतिफल स्वरूप दृष्टि प्रतिमाओं का भी सम्प्रेषण करते हैं। उनके कृतित्व के आकर्षण की शक्ति है संवाद। साहचर्य से चित्त की द्रवणशीलता एक संवाद के रूप में विस्तृत हुई है। कृतित्व में विभिन्न क्रीड़ा विधानों का अनुसंधान सूर के कवि ने किया है। रूपान्तर की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का प्रयोग भी सूर ने किया है। भाव धारा के उमड़ने के पश्चात् उसके समाहित होने की प्रक्रिया सूर के संवादों में हुई है। सूर के संवादों में ऊद्धव–गोपी–संवाद वाद–विवाद के झमेलों के समाधान का उपाय है। अर्थात् उनके संवाद वाद–विवाद का समाधान करते हैं। हृदय में उमडती हुई भाव धारा के ज्वार को बाहर निकालने का साधन संवाद हैं। इन्हीं आधारों पर सूर के कृतित्व में संवाद संचार सम्भव हुआ है। वे जन मानस में भाव संचार के कवि हैं। जन संचार का सशक्त रूप उनमें विद्यमान है। अनेक रूपों में चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता इसी कारण सम्भव हुई है। भावोदय से लेकर भाव की तुष्टि करने तक अद्भुत संचार करने में सूर विलक्षण हैं। हृदयगत भावों को संवाद में बाँधना और संवाद में बाँधकर उन्हें पुनः मुक्त कर देना सूर की रचनाधर्मिता है। इस प्रकार संवाद भाव को बाँधकर भाव को मुक्त करते हैं। उनके संवाद उनके कृतित्व की संजीवनी है। संवादों का एक छत्र साम्राज्य उनके कृतित्व में है। शास्त्रीय वाद–विवाद को सहज सरल संवाद में बदलने का कार्य सूर ने किया है। भाव प्रेरित होने पर भाव संचालन समाधि करते हैं। प्रभावोत्पादकता की निष्पत्ति, पुनर्रचना मूल भाव के प्रभाव जैसी रहती है। पुनः सर्जन भावात्मक ही बना रहता है। सरल–सहज संवादों ने कृतित्व को मिथ्याडम्बर बनने से बचाया है। भीतर के प्रवाह को यथावत् प्रकट कर देना सीधा संवाद है। इस सीधे संवाद को उलट कर पुनः सीधा करना संवाद की प्रभावोत्पादकता है। अतः संवाद उनके कृतित्व में एक वैशिष्ट्य का समावेष करते हैं। उक्ति वैचित्र्य का उद्देश्य चरितार्थता एवम् प्रभावोत्पादकता को सार्थक करना है। सूरदास में इस वैभव का प्रचुर प्रयोग मिलता है। उनके संवाद उक्ति वैचित्र्य के भावपूर्ण उदाहरण हैं। उनका कृतित्व एक मनोवैज्ञानिक तत्व पर आधारित है कि भावोन्मेश के क्षणों में कृतित्व की चरितार्थता का स्वरूप सहज न रहकर उलट जाता है, जिससे कृतित्व के रचना विधान में वक्रता का समावेश होने से कवि के संवाद में योजना से लेकर चरितार्थता तक परिवर्तन हो जाता है– कृतित्व में यह परिवर्तन संवाद में परिवर्तन का कारक बनता है। सूर के संवाद चित्त वृत्तियों के संवादों का परिमार्जन कर उन्हें उदात्त बनाते हैं और इस कारण कृतित्व के दोषों की ओर ध्यान नहीं जाता।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *'सम्पादक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल' सूरदास कृत भ्रमरगीत सार, कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1979, पृष्ठ 6*
2. *हनुमान प्रसाद पौद्धार, 'श्रीमद्भागवत, सुधा सागर', गीताप्रेस, गौरखपुर सम्बत् 2061, पृष्ठ 693–695*
3. *डॉ0 मुन्शीराम शर्मा, 'सूरदास का काव्य वैभव', ग्रन्थम, कानपुर, 71, पृष्ठ 39–40*
4. *प्रो0 हरिमोहन, 'सूचना क्रांति और विश्व भाषा हिन्दी', तक्षशिला प्रकाशन, 23/4761,अन्सारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली 2*
5. *हौसिला प्रसाद सिंह, 'हिन्दी कृष्ण काव्य में व्यंग्य', विनोद प्रकाशन, संस्थान, नई दिल्ली*
6. *सावित्री सिन्हा, 'ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्य में अभिव्यंजना, शिल्प नेशनल पब्लिशिंग हाऊस,दिल्ली 2*
7. *डा0 वेदप्रकाश शास्त्री, 'श्रीमदभागवत और सूरसागर का वर्ण्य विषय का तुलनात्मक अध्ययन', सरस्वती सदन, आगरा*